आर्य समाज 150 मानव सेवा के स्वर्णिम वर्ष 1875-2025

महर्षि दयानन्द सरस्वती

टंकारा समाचार

(श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट का मासिक पत्र)

जुलाई 2025 वर्ष 29, अंक 07 ❑ दूरभाष (दिल्ली): 23360059, 23362110 (टंकारा): 02822-287756 ❑ विक्रमी सम्वत् 2082 ❑ कुल पृष्ठ 16
ई-मेल: tankarasamachar@gmail.com ❑ एक प्रति का मूल्य 20/-रुपये ❑ वार्षिक शुल्क 200 रुपये ❑ आजीवन 1000/-रूपये

अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ-प्रकाश'

सम्पूर्ण आर्य जगत व मानव मात्र की आत्म क्रान्ती एवम् नींव का पत्थर है

❑ पं. उम्मेद सिंह विशारद

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के गुरू विरजानन्द सरस्वती जी की शिक्षा का तीन वर्ष का चमत्कार 1860 से 1863 तक- ऋषि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म 1824 में हुआ था। वे 1860 में गुरू विरजानन्द जी के पास अध्ययन के लिए पहुँचे। उस समय उनकी आयु 36 वर्ष की थी। 1863 में उन्होंने अपने गुरू से शिक्षा ली और जीवन क्षेत्र में उतर पड़े। गुरू विरजानन्द जी के पास उन्होंने जो कुछ भी सीखा था वही उनकी वास्तविक शिक्षा थी, क्योंकि इससे पहले वे जो कुछ भी पढ़ आये थे उसे गुरू विरजानन्द जी से भुला देने की प्रतिज्ञा ली थी। उन्होंने अपने जीवन काल में जितने प्रवचन किये, जितने ग्रन्थ लिखे और जितने शास्त्रार्थ किये वह इन तीन साल के अध्ययन का ही परिणाम था। इससे स्पष्ट होता है इन तीन सालों में जो उन्होंने पाया वह कितना मूल्यवान था।

अपने गुरू विरजानन्द जी से उन्होंने जो गुण पाया था वह आर्ष व अनार्ष ग्रन्थों में भेद करना था। आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन का उनका कुल समय तीन वर्षों का था। इन तीन वर्षों के अध्ययन ने उनके जीवन में उनके विचार धारा में जो क्रान्ती उत्पन्न कर दी उससे भारत के पिछले डेढ़ सौ (150) वर्षों का इतिहास बन गया।

वैचारिक क्रान्ती का मूल स्त्रोत सत्यार्थ प्रकाश का लेखन- वैचारिक क्रान्ती का मूल स्त्रोत उनका ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश है। सत्यार्थ-प्रकाश 1874 में लिखा गया था, मुरादाबाद के राजा जयकृष्ण दास जब काशी में डिप्टी कलेक्टर थे, तब ऋषि दयानन्द काशी पधारे थे। राजा कृष्णदास जी ने कहा कि हे ऋषि आपके उपदेशामृत से वे ही लाभ उठा सकते हैं जो आपके प्रवचन सुनते हैं। जिनको आपके प्रवचन सुनने का अवसर नहीं मिलता उनके लिए अगर आप अपने विचारों को ग्रन्थ के रूप में लिख दें तो जनता का बड़ा उपकार होगा। ग्रन्थ छपने का भार राजा जयकृष्णदास ने अपने ऊपर ले लिया। आश्चर्य है कि इनका विशाल ग्रन्थ जिसे पं. गुरूदत्त विद्यार्थी जी ने 14 बार पढ़कर कहा कि हर बार के अध्ययन में उन्हें नया रत्न हाथ आता है वह कुल साढ़े तीन माह में लिखा गया था।

सत्यार्थ-प्रकाश में पाया गया कि उसमें 377 ग्रन्थों का हवाला है। इस ग्रन्थ में 1542 वेद मंत्रों का व श्लोकों का उदाहरण दिया गया है। चारों वेद सब ब्राह्मण ग्रन्थ सब उपनिषद, छहों दर्शन शास्त्र 18 स्मृति सब पुराण सूत्र-ग्रन्थ ग्राह्यसूत्र-जैन बौद्ध ग्रन्थ, बाइबल, कुरान, इन सबका उदाहरण ही नहीं उनका (उल्लेख) रेफरेन्स भी दिया गया है, किस ग्रन्थ में कौन सा मंत्र या श्लोक या वाक्य कहां है उसकी संख्या क्या है यह सब कुछ ऋषि दयानन्द सरस्वती जी ने तीन महीने में तैयार कर लिया था।

साधारण ग्रन्थ की बात दूसरी है सत्यार्थ प्रकाश एक मौलिक विचारों का ग्रन्थ है। ऐसा ग्रन्थ जिसने समाज को सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक हिला दिया था। ऋषि दयानन्द जी के सत्यार्थ-प्रकाश ने समाज को नवीन दृष्टिकोण को जन्म दिया। ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ ने भारत का सास्कृतिक तथा सामाजिक ढांचा हिला दिया।

'सत्यार्थ प्रकाश चुने हुए सुधारवादी विचारों का खजाना है- ऐसे विचार उस युग में कोई सोच भी नहीं सकता था। समाज की रचना जन्म के आधार पर न होकर कर्म के आधार पर होनी चाहिए, सत्यार्थ-प्रकाश का यही एक विचार इतना क्रान्तिकारी था कि इसको क्रिया में आने से हमारी 90 प्रतिशत समस्यायें हल हो जाती है। ऐसे संगठन में जन्म से कोई नीचा, न ऊंचा, न जन्म से गरीब न कोई अमीर जो कुछ हो कर्म से हो। शिक्षा के क्षेत्र में गुरूकुल प्रणाली का विचार सत्यार्थ-प्रकाश की ही देन है। सबसे पहले ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थ-प्रकाश के आठवें सम्मुलास में लिखा था कि कोई कितना भी कहे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि व उत्तम होता है। ऋषि दयानन्द जी ने 1874 में अंग्रेजी राज्य में कोई व्यक्ति यह लिखने का साहस कर सकता है। यह जानकर आश्चर्य होता है।

भारत के घोर अन्धेरे युग में अनेक चुनौतियों को स्वीकार करने के

(शेष पृष्ठ 15 पर)

'टंकारा समाचार' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पानी सफेद सोना है इसे बचाएं

- पदम्श्री डॉ. पूनम सूरी

प्रधान, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकत्री समिति एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, ट्रस्ट प्रधान महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा (जन्मभूमि)

पानी की आवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है तथा इस आवश्यकता को नदी-झरने आदि पारम्परिक स्त्रोत पूर्ण करने में सक्षम नहीं हैं। भू-जल एक निरंतर एवं विश्वसनीय स्त्रोत है, जिससे हमें रंगहीन, गंधहीन, जीवाणुहीन तथा शुद्ध जल प्राप्त होता है। किन्तु भू-जल का दोहन निरंतर बढ़ता जा रहा है। इस अनियोजित भू-जल दोहन किये जाने की वजह से भू-जल स्तर निरंतर गिरता जा रहा है। इस गिरते भू-जल स्तर को नियंत्रित करने के लिए जमीन पर उपलब्ध नदी-झरने आदि के जल को पुन: चक्रित एवं परीक्षित करने की महती आवश्यकता है। जीवन बचाना है तो इन उपायों पर हमें विचार करना ही होगा। जल संकट की बिगड़ती स्थिति तब तक जारी रहेगी, जब तक हम जल के प्रयोग, संरक्षण तथा सुधार के अथक प्रयास नहीं करते।

जल ही जीवन है तथा यह एक बहुमूल्य राष्ट्रीय निधि है। सभ्यता में सुधार से आज मानव अधिकाधिक एवं स्वच्छतम जल चाहता है। आजकल तो किसी शहर में जब तक कोई सुव्यवस्थित जल सम्भरण प्रणाली न हो तो दैनिक जीवन चलना असंभव हो जाता है।

आज परम्परागत तरीकों जैसे नलकूपों, कुओं आदि से पानी का अत्यधिक दोहन होने से भूजल में कमी हो गई हैं। इन पर अंकुश लगाने के लिए गैर पारम्परिक स्त्रोतों को अपनाये जाने की आवश्यकता है। इसके लिए हम रूफ टाप रेन वाटर हार्वेस्टिंग, रैनी वैल आदि तरीकों से जल संरक्षण कर सकते हैं। नदियों-नालों के रास्ते खराब जाने वाले जल के संरक्षण एवं पुन: चक्रण की आवश्यकता है। यदि हमने जल संरक्षण के तरीकों को अपनाकर लाभ न उठाया तो आने वाले कुछ दशकों में पानी के लिए युद्ध जैसी स्थिति हो जायेगी तथा स्वच्छ जल के अभाव में मानव सभ्यता खतरे में पड़ जायेगी।

सेंट्रल ग्राउंड वाटर बोर्ड नई दिल्ली का आकलन यह दर्शाता है कि वर्ष 2025 तक कम से कम दो से 15 राज्यों में भू-जल पूर्णत: सूख जायेगा तथा वर्ष 2050 तक जल भारत की 50 प्रतिशत जनसंख्या शहरों में रहने लगेगी तो विस्थापितों की एक नई कैटेगरी बन जायगी जो कि वाटर माइग्रेट (जल विस्थापित) कहलायेगी। भविष्य में पानी के लिए गृह-युद्ध या राष्ट्रों के मध्य युद्ध की भीषण संभावनाएं हैं।

दैनिक प्रयोग में आने वाले जल पर नियंत्रण हेतु जल के दृढ़ कथनों को जानना अति आवश्यक है। यह हमारे लिए लाभदायक है।

- ❑ खुले नल से 32 दांतो को साफ करने पर 32 लीटर ही पानी खपत होता है।
- ❑ बन्द नल से केवल एक लीटर पानी की खपत होती है।
- ❑ खुले नल से शेविंग करने से 60 लीटर
- ❑ कप मग में केवल एक लीटर पानी से शेव की जा सकती है।
- ❑ शावर बाथ करने से 115 लीटर पानी चाहिए।
- ❑ बाल्टी/टब में 22/25 लीटर में ही संतोषजनक स्नान।
- ❑ खुले नल से कपड़ों को खंगालने से 168 लीटर/दिन
- ❑ बाल्टी/टब में 20 लीटर पानी से आपका उद्देश्य हल हो सकता है।
- ❑ खुले नल से शौचालय की सफाई हेतु 2200 लीटर पानी की प्रतिदिन खपत होती है।
- ❑ जबकि इसके लिए 275/300 लीटर पानी शफीशैंट होता है।
- ❑ देश के विकास हेतु इसे बचाएं और पैदा होता संकट टालें।
- ❑ प्रयास छोटे लगते हैं लेकिन संयुक्त रूप करने का प्रभाव अधिक छोड़ेगें।

जल समस्या निवारण हेतु राष्ट्रीय स्तर पर भी नदियों को आपस में जोड़कर सभी को जल उपलब्ध करवाने हेतु प्रयास किया जा रहा हैं वर्ष 2003-04 में स्वच्छ जल वर्ष घोषित किया गया था। जल स्त्रोतों की योजना एवं विकास को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य द्वारा शासित किए जाने की आवश्यकता है।

जिस प्रकार बूंद-बूंद से सागर भरता है, ठीक उसी प्रकार रिसाव (लीकेज) से जल व्यर्थ जाता है। हमें इस लीकेज को रोकना होगा, जल, जो हमारा जीवन है, को बचाना होगा। इसकी सफलता हेतु जनसहयोग लेना होगा, ज्यादा से ज्यादा जग जागरूकता बढ़ानी होगी।

मैं आप सबसे अनुरोध करता हूं कि आओ हम सभी मिलकर दैनिक प्रयोग होने वाले जल पर नियंत्रण करें और जल का सही प्रयोग करने हेतु जल के दृढ़ कथनों को जानें, विचारें और इन्हें अपने जीवन में अपनाने का प्रयास करें। धन्य होऊंगा।

- पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी जी के साथ अनऔचपारिक बैठक में चर्चा के कुछ अंश

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह।
इषं स्वश्च धीमहि॥ 7/66/9

भावार्थ-*हे परमात्म देव! हम पर कृपा करें कि हम आपके ही प्रेमी भक्त स्तुतिगायक और मानने वाले होवें। केवल हम ही नहीं किन्तु, विद्वानों और बान्धव मित्रों के साथ, हम आपके प्रेमी भक्त होवें। भगवन्! आपकी कृपा से हम, धन धान्य और ज्ञान को प्राप्त होकर नित्य सुख को भी प्राप्त करें।*

जो हम नहीं कर पाये

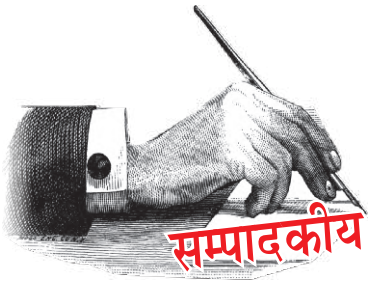

कुछ वर्ष पूर्व की बात है, दिल्ली के एक अस्पताल में एक व्यक्ति एक दुर्घटना में घायल होने के उपरान्त 5 दिन से बेहोश पड़ा मृत्यु और जीवन में संघर्ष कर रहा था। दिल्ली के सभी प्रमुख चिकित्सक अपने पूर्ण प्रयत्न कर चुके पर वह व्यक्ति होश में नहीं आया, निराश हो प्रत्येक ने अपनी असमर्थता दिखाई।

सभी हैरान थे कि चांद पर पहुंचने वाले मानव, समुद्र की गहराई को वश में करने वाला मानव कैसे आज विवश हो गया। उसके सभी आविष्कार परास्त हो गये, अपनी चरमसीमा तक पहुंची, चिकित्सा हार गई। मानव की बुद्धि, शक्ति, सामर्थ्य सभी हार गए।

सब हारने के बाद भी नहीं हारी उस व्यक्ति की मां, अपनी प्रार्थना पर विश्वास और अन्तर्मन की सच्ची प्रार्थना पर उसे पूर्ण विश्वास है। मां का कहना था कि जिस प्रभु ने मेरी प्रार्थना से उसको अभी तक जीवन दिया हुआ है, वही आगे भी मेरे बालक का जीवन बचायेगां माँ कहती है, 'जो मानव नहीं कर पाया वह भगवान करेगा। और छठे दिन रात्रि को वो हुआ जो मानव नहीं कर सका वो भगवान ने कर दिखाया, उस व्यक्ति ने आंखें खोली और होश में आया।

ईश्वर की चमत्कारी की सच्ची आपबीती, आन्तरिक प्रार्थना के अनेकों उदाहरण हम जीवन में घटते देखते हैं। किसी ने ठीक ही लिखा है कि प्रार्थना से जितने कार्य सम्पन्न होते हैं, संसार उसकी स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता। वेद के अनुसार स्तुति प्रार्थना उपासना उतनी ही सत्य है जितना हम उठते-बैठते, चलते-फिरते, खाते इत्यादि सत्य है। यहां कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि प्रार्थना ही एकमात्र परम सत्य है। प्रार्थना ही सब कुछ है, जीवन का एक अभिन्न अंग है।

प्रार्थना भगवान से मिलने, उससे वार्तालाप करने, उसके दिव्य गुणों को ग्रहण करने का सर्वोत्तम साधन है। सम्बलहीन का सम्बल है। तपती हुई मरुभूमि में शीतल झरना है। जन्म-जन्म से तपते, जलते, तड़पते हृदय में जब प्रार्थना का दिव्य अमृत उठता है तो युग-युग की यादें लहलहा उठती हैं। नवीन आशा का संचार होने लगता है।

जैसे ऊंट दिनभर मरुभूमि में चलने से पहले अपने भीतर पानी भर लेता है और दिन पर मरुभूमि की उसी जलती, तपती बालू में सहज ही बिना कष्ट के चलता जाता है। उसी प्रकार प्रातः जब मनुष्य अपने भीतर प्रभु प्रार्थना रूपी जल भर लेता है तो दैनिक कार्यक्रम रूपी मरुभूमि में चलना सहज और सुगम हो उठता है और सांझ को दिन भर जब सांसारिक कार्य करके मन थक जाता है और विश्राम चाहता है तब भगवान की ओर उसका झुकाव सहज ही हो जाता है। जैसे दिन भर का थका-हारा मनुष्य अपने घर में आकर अपनी मां, पत्नी, बच्चों से बात करके सुख का अनुभव करने लगता है। उसकी सारी थकावट दूर हो जाती है, उसी प्रकार दैनिक उलझनों में उलझा, अनगिनत समस्याओं के बोझ में बोझिल थका-हारा मन अपना समस्त बोझ, सारी उलझनें, सब समस्याएं उस परमपिता के सामने रखकर एक अवर्णनीय शक्ति का अनुभव करने लगता है। तभी तो हर समय ही, हर बेला, हर मौका प्रार्थना के लिए उचित है। जितनी ही अधिक प्रार्थना करेंगे उतना ही अच्छा है। उतना ही अधिक सुख पायेंगे। सब समस्याओं को सुलझाने, सब बुराईयों पर विजय पाने, का एकमात्र साधन है प्रार्थना।

प्रायः यह प्रश्न उठता है कि प्रार्थना की अवधि कितनी हो, प्रार्थना के शब्द कैसे हों, क्या हैं इत्यादि। वास्तव में अवधि तथा शब्दों का विशेष महत्त्व नहीं। महत्त्व है हृदय की सच्चाई का, अन्दर की सच्ची पुकार का। भगवान को न लम्बा समय चाहिए, न सुन्दर शब्द चाहिए और न ही अलंकृत भाषा। उसे तो हृदय से उमड़े हुए भाव चाहिए। हृदय की सरलता, शुद्धता, सच्चाई, निष्कपटता तथा विश्वास चाहिए। सच्ची प्रार्थना हृदय की गहराई में है।

श्री बुक के शब्दों में- God hears no more than the heart speaks and if the heart is dumb God will certainly be deaf. (भगवान केवल हृदय की पुकार सुनता है, यदि हृदय गूंगा है तो भगवान निश्चय ही बहरा हो जायेगा)।

प्रार्थना तथा विश्वास- प्रार्थना में सबसे अनिवार्य वस्तु है विश्वास। प्रार्थना करते समय भगवान की शक्ति में अटल विश्वास होना आवश्यक है। भगवान की अमोध शक्ति में असाध्य को साध्य, असंभव को संभव बना देने की शक्ति है।

उस परमपिता की कृपा के शब्दकोष में 'असंभव' शब्द है ही नहीं। गुरु नानकदेव ने कहा है-'यदि हृदय में प्रभु का अटल विश्वास है तो तू विश्व विजयी होगा।' कुछ लोगों को भगवान की कृपा पर संशय होता है। पर भगवान की कृपा तो सदा बरसती है, परन्तु हमें उसे ग्रहण करना ही नहीं आता। हम संशय, अविश्वास तथा अश्रद्धा, रूपी छलनी लेकर उसके समीप जाते हैं। यदि अविश्वास के पत्थर पर भगवद् कृपा का बीज बोएंगे तो क्या वह कभी उग पाएगा।?

कहते हैं-'झोली ही तेरी तंग है मेरे यहां कमी नहीं।'

जब हम पूर्ण रूप से अपनी नैय्या उसके हवाले कर देते हैं तो हमें न कुछ कहने की और न कुछ मांगने की आवश्यकता रह जाती है।

हमारी हर इच्छा की पूर्ति स्वयं ही करते रहते हैं। यदि कभी मनचाही इच्छा की पूर्ति परमपिता नहीं होती तो या तो हमारी प्रार्थना में कमी होती है और यह फिर उस इच्छा का पूरा होना हमारे लिए हितकर नहीं है। भगवान को हमारी चिन्ता हमसे अधिक रहती है। वह जानता है कि कब, क्या और कितना देना है। जैसे एक बालक पिता से मोटर साइकिल चलाने की जिद करता है, पिता उसे मोटर साइकिल चलाने नहीं देगा, चाहे वह बालक को कितना ही स्नेह क्यों न करता हो। कितना ही लाड़-प्यार क्यों न करता हो पर वह उसे मोटर साइकिल चलाने नहीं देगा। वह जानता है कि मोटर साइकिल चलाना उसके लिए घातक है। सो, भगवान की हर देन को सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। उसमें मंगल ही मंगल है। कल्याण ही कल्याण है।

प्रार्थना से अभिमान का नाश होता है। आत्मविश्वास बढ़ता है। आत्मबल इतना बढ़ जाता है कि पर्वत के समान दुःख प्राप्त हो जाने पर भी मनुष्य घबराता नहीं। जैसे शीत से ठिठुरते हुए व्यक्ति का अग्नि के पास जाने पर शीत मिट जाता है, उसी प्रकार परमेश्वर के निकट जाने से मनुष्य के सब कष्ट सब दुःख मिट जाते हैं। वह पवित्र हो जाता है। इसलिए भरोसा कर तू ईश्वर पर, तूझे धोखा नहीं होगा।

अजय टंकारावाला

टंकारा ट्रस्ट द्वारा चलाई जा रही गतिविधियों के लिए आप निम्न प्रकार से सहयोग कर सकते हैं

परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं अथवा गुरुकुल के
एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय 20,000/- रुपये देवें

गौ-दान : महा-दान–उपदेशक विद्यालय के ब्रह्मचारियों की पर्याप्त मात्रा में दूध की व्यवस्था हेतु एक गऊदान करें अथवा 75,000/- रुपये की सहयोग राशि गऊ हेतु देवें।
(तीन व्यक्ति मिलकर भी 25,000/- प्रति व्यक्ति भी दे सकते है।)

गऊ पालन एवं पोषण हेतु 12,000/- रुपये का हरा चारा एवं
पौष्टिक आहार की व्यवस्था (एक गऊ का वार्षिक व्यय)

1000/- रुपये की सहयोग राशि देकर स्वामी दयानन्द सरस्वती जन्मभूमि के सहयोगी सदस्य बनें। यह राशि आपको प्रतिवर्ष देनी होगी। इसलिए अपना पूरा पता अवश्य लिखवायें।
जो दान देवें उसके अतिरिक्त यह 1000/- रूपये राशि अवश्य देवें।

श्री ओंकारनाथ महिला सिलाई-कढ़ाई केन्द्र की बेटियों द्वारा बनाए गए
सामान को क्रय करके सहयोग कर सकते हैं।

ब्रह्मचारियों के एक सत्र का भोजन 20,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर।

ऋषि बोधोत्सव पर 1,50,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर एक सत्र के भोजन में सहयोग

20,000/- रुपये की सहयोग राशि प्रति वर्ष किसी एक दिन का (जन्मदिवस अथवा स्मृति दिवस) ब्रह्मचारियों का भोजन देकर सहयोग कर सकते है।

ब्रह्मचारियों के पहनने हेतु सफेद कपड़ा एवं दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुएं देकर

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर की धारा 80 G के अन्तर्गत मान्य है।
एवम् C.S.R. दान प्राप्त करने हेतु पंजीकृत।

यह दान नकद/चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा **"श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा"** के नाम दिल्ली कार्यालय आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 अथवा श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा जिला-मौरबी-363650 (गुजरात) के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें। आप सहयोग राशि खाता न. 4665000100001067, पंजाब नैशनल बैंक, IFSC CODE PUNB0015300 में जमा करा सकते हैं अथवा दिए गए क्यू.आर.कोड (YES Bank) पर स्कैन करके राशि जमा करा सकते है। जमा की गई सहयोग राशि, तिथि एवम् पते की सूचना मो. 09560688950 पर देवें।

–:निवेदक:–

योगेश मुंजाल
कार्यकारी प्रधान

अजय सहगल
मन्त्री (मो. 9810035658)

उपकार्यालय: आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 सम्पर्क: 09560688950 (व्यवस्थापक)

ऋषि जन्मभूमि टंकारा में प्रवेश प्रारंभ

श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट-टंकारा द्वारा संचालित

महात्मा सत्यानन्द मुंजाल गुरुकुल (आर्य पद्धति कक्षा 6 से 10वीं तक)

श्री महर्षि दयानन्द अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय

कक्षा-6 (प्रथमा प्रथम खण्ड)
कक्षा-7 (प्रथमा द्वितीय खण्ड)
कक्षा-8 (प्रथमा तृतीय खण्ड)
कक्षा-9 (पूर्व मध्यमा प्रथम वर्ष)
कक्षा-11 (उत्तर मध्यमा प्रथम वर्ष)
कक्षा-उपदेशक (10वीं कक्षा उत्तीर्ण होने के बाद)

प्रवेश हेतु आवेदन करें: 15 जून 2025 से 15 जुलाई 2025

प्रवेशार्थ संक्षिप्त नियमावली- ❑ गुरुकुल में परीक्षा-पाठ्यक्रम कक्षा 6-12 तक हरियाणा शिक्षा बॉर्ड द्वारा सम्बन्धित है। ❑ 12वीं से शास्त्री (बी.ए.) पर्यन्त महर्षि दयानन्द विश्व विद्यालय रोहतक हरियाणा से सम्बन्धित है। ❑ गुरुकुल के पाठ्यक्रम में संस्कृत मुख्य विषय है। ❑ अनुशासन एवं व्यवस्था गुरुकुलीय है, जिसका परिपालन प्रत्येक छात्र द्वारा करना अनिवार्य होगा। अनुशासन भंग करने तथा अध्ययन में अयोग्य सिद्ध होने पर छात्र को निष्कासित कर दिया जायेगा। ❑ गुरुकुलीय अनुशासन के अन्तर्गत निर्धारित अथवा भाविष्य में पारित तथा संशोधित समस्त नियम छात्र एवं अभिभावकों द्वारा पूर्णतः स्वीकरणीय होंगे। ❑ गुरुकुल परिसर में गुरुकुलीय गणवेश के अतिरिक्त वस्त्र-धारण की स्वीकृति नहीं दी जायेगी। ❑ गुरुकुलीय व्यवस्था में किसी पर्व आदि अवसरों पर छात्र को गृह-अवकाश पर भेजने का नियम नहीं है। विशेष परिस्थिति में आचार्य की अनुमति से अवकाश प्रदान किया जा सकता है। अवकाश समाप्ति के 10 दिन तक अनुपस्थित रहने पर छात्र का नामांकन निरस्त समझा जायेगा। ❑ प्रवेश के लिए आवेदन-पत्र के साथ छात्र का पूर्व विद्यालय की उत्तीर्ण अंकसूचि, स्थानन्तरण-प्रमाण (T.C) सम्बन्धित शिक्षाधिकारी से प्रतिहस्ताक्षरित (Counter sign) किया हुआ संलग्न करना अनिवार्य है। ❑ छात्र की लिखित एवं मौखिक प्रवेश-परीक्षा आवश्यक है, उसमें उत्तीर्ण होने पर ही प्रवेश हो सकेगा। ❑ छात्र स्वस्थ, सुशील एवं बुद्धिमान होना चाहिए।

गुरुकुल में क्यों पढ़े?- ❑ ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानने के लिए, ❑ सन्तानों को सुशिक्षित करने के लिए, ❑ अन्धविश्वास और पाखण्डों को चुनौति देने के लिए, वैदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए, ❑ गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था की स्थापना के लिए, ❑ आश्रम व्यवस्था को जानने के लिए, राजधर्म को जानने के लिए, ईश्वर, जीव और प्रकृति के भेद को समझने के लिए, जगत् की उत्पति, स्थिति और प्रलय को समझने के लिए, ❑ बन्धन और मोक्ष विषय को जानने के लिए, ❑ धर्म के सत्य स्वरूप को जानने के लिए, ❑ भारत वर्ष में फैले मत-मतान्तरों में सत्य असत्य का निर्णय करने के लिए, ❑ भारतीय संस्कृति को समझने के लिए, ❑ युवकों में बढ़ती हुई नास्तिकता को रोकने के लिए, ❑ धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक क्रान्ति के लिए, ❑ विश्व में मानव धर्म को विस्तृत करने के लिए, ❑ वैचारिक क्रान्ति के लिए।

सुविधाएँ- ❑ आवास व्यवस्था, ❑ उच्च गुणवतायुक्त भोजन (पौष्टिक), ❑ निःशुल्क शिक्षा, ❑ गुणवतायुक्त शिक्षा, ❑ स्वच्छ वातावरण, ❑ खेल-कूद का मैदान, ❑ निःशुल्क प्राथमिक उपचार, ❑ प्रत्येक बच्चे का मानसिक, शारिरीक नैतिक व भावात्मक विकास।

आचार्य रामदेव शास्त्री, मो. 7990163657, 9913251448
डाक टंकारा, जिला मोरबी (सौराष्ट्र गुजरात) 363650, फोन- 0282287756

अनुभवों के साथ-साथ आदर्श भी बदल जाते हैं

(एक विचारशील सामाजिक व मनोवैज्ञानिक विश्लेषण)

❑ कीर्ति शर्मा

मानव जीवन का आधार केवल भौतिक उपलब्धियाँ नहीं, बल्कि वह मूल्य और आदर्श भी होते हैं जो उसकी सोच, व्यवहार और चरित्र को आकार देते हैं। परंतु ये आदर्श स्थिर नहीं होते। समय के साथ, अनुभवों के साथ, परिस्थितियों और संबंधों के साथ, व्यक्ति के आदर्श भी बदलते हैं। यह बदलाव स्वाभाविक भी है और आवश्यक भी।

आदर्शों की उत्पत्ति और उनकी भूमिका- प्रारंभिक जीवन में व्यक्ति अपने आसपास के वातावरण से प्रभावित होता है। माता-पिता, शिक्षक, धार्मिक ग्रंथ, और समाज के बुजुर्ग उसकी सोच में बीज बोते हैं कि 'क्या सही है' और 'क्या गलत।' यह प्रक्रिया संस्कारों का रूप लेती है और इन्हीं से आदर्शों का निर्माण होता है। उदाहरण के लिए, एक बच्चा सीखता है कि सच्च बोलना, बड़ों की सेवा करना, देशभक्ति, और ईमानदारी सर्वोच्च गुण हैं।

इन आदर्शों का उद्देश्य व्यक्ति को एक नैतिक ढांचा देना होता है ताकि वह जीवन में निर्णय लेते समय एक स्पष्ट दिशा में सोच सके। लेकिन जैसे-जैसे व्यक्ति अनुभव करता है, वह यह समझने लगता है कि हर स्थिति काली या सफेद नहीं होती, अक्सर जीवन धूसर रंगों से भरा होता है।

अनुभवों की शक्ति आदर्शों पर पुनर्विचार की आवश्यकता- मान लीजिए कोई व्यक्ति जो हमेशा 'सच बोलने' को सर्वोच्च आदर्श मानता है, वह एक ऐसी परिस्थिति में आता है जहाँ सच बोलने से किसी प्रियजन को नुकसान पहुँच सकता है। ऐसे में वह दुविधा में पड़ता है, क्या सच बोलना ही सर्वोत्तम है, या परिस्थिति के अनुसार संवेदनशील होना अधिक उचित होगा?

इसी प्रकार, एक युवा जो 'कैरियर से पहले परिवार' को प्राथमिकता देने में विश्वास रखता था, जब नौकरी के दबाव और जीवन की वास्तविकताओं से गुजरता है, तो वह अपने विचारों को नए संदर्भ में देखने लगता है। यह बदलाव परिपक्वता का संकेत है, कोई कमजोरी नहीं।

आदर्शों का लचीलापन बनाम नैतिकता का पतन- बहुत बार आदर्शों में बदलाव को नैतिक पतन समझा जाता है, पर ऐसा नहीं है। आदर्श तब तक प्रभावी रहते हैं जब तक वे यथार्थ के अनुकूल हों। जीवन की कठोर सच्चाइयाँ हमें यह सिखाती हैं कि कभी-कभी 'समझदारी' और 'संवेदनशीलता' भी उच्च आदर्श हो सकते हैं।

उदाहरणस्वरूप, पुराने समय में विवाह जीवनभर का बंधन माना जाता था। एक बार शादी, तो जीवन भर साथ।' परंतु अब जब व्यक्ति अस्वस्थ संबंधों में मानसिक आघात झेलने लगता है, तब तलाक को एक सामाजिक स्वीकृति मिलना, अनुभवजन्य बदलाव का ही प्रमाण है।

समाज और संस्कृति में आदर्शों का स्थानांतरण- समाज भी एक जीवंत इकाई है, जो समय के साथ अपने मूल्यों और आदर्शों को पुनर्परिभाषित करता है। एक समय था जब स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखा जाता था, और यही 'आदर्श' माना जाता था। पर अनुभवों, आंदोलनों, संघर्षों और जनजागृति के बाद यह सोच बदली, और आज महिला शिक्षा को एक सामाजिक दायित्व माना जाता है।

आज हम ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं जहाँ व्यक्तिगत स्वतंत्रता, मानसिक स्वास्थ्य, कार्य-जीवन संतुलन और आत्म-सम्मान जैसे मूल्य आदर्श की नई परिभाषाएँ बन चुके हैं। अब बलिदान से अधिक विवेक, और परंपरा से अधिक तर्क की सराहना की जाती है।

व्यक्तिगत विकास और आदर्शों का पुनर्निर्माण-जीवन में आने वाले अनुभव चाहे सुखद हों या कष्टदायक, वे हमारे सोचने, समझने और निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करते हैं। जैसे-जैसे हम नये अनुभव अर्जित करते हैं, वैसे-वैसे हम अपने पुराने आदर्शों को चुनते, सुधारते या त्यागते हैं। महात्मा बुद्ध की कहानी इसका उदाहरण है-राजसी जीवन जीते हुए भी उन्होंने जीवन की वास्तविकता (जन्म, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु) देखी, और उनके आदर्श पूरी तरह बदल गए। अनुभव ने उन्हें 'संवेदना' और 'निर्वाण' का मार्ग दिखाया।

परिवर्तन ही जीवन है-अनुभवों के साथ-साथ आदर्श भी बदल जाते हैं, यह पंक्ति हमें न केवल सामाजिक, बल्कि आत्मिक विकास की ओर संकेत देती है। आदर्शों का परिवर्तन केवल एक मानसिक प्रक्रिया नहीं, यह आत्मावलोकन, परिपक्वता और लचीलापन दर्शाता है।

आदर्श पत्थर की लकीर नहीं होते हैं, वे समय, अनुभव और परिस्थितियों के अनुरूप ढलते हैं। यही परिवर्तन हमें एक अधिक सहिष्णु, जागरूक और मानवीय समाज की ओर ले जाता है। अतः जब भी हम अपने भीतर पुराने आदर्शों के स्थान पर नए मूल्यों को स्थान देते हैं, तो यह समझना चाहिए कि हम अनुभवों की कसौटी पर खरे उतरते हुए एक नए स्तर की चेतना को प्राप्त कर रहे हैं।

-65/21, न्यू रोहतक रोड, करोल बाग, नई दिल्ली

पश्चात् पुरस्तादधरादुतोत्तरात् कविः काव्येन परि पाह्यग्ने।
सखा सखायमजरो जस्मिण अग्ने मर्ता अमर्त्यस्त्वं नः॥ 8/3/20

भावार्थ-*हे ज्ञानमय ज्ञानप्रद परमात्मन्! आप अपनी सर्वज्ञता और रक्षा से पूर्व आदि सब दिशाओं में हमारी रक्षा करें। आप ही हमारे सच्चे मित्र हैं, आप जरा-मरण से रहित अजर अमर हैं, हम तो जरा-मरण युक्त हैं आप के बिना हमारा कोई रक्षक नहीं, हम आप की शरण में आये हैं आप ही रक्षा करें।*

आवश्यक सूचना

आपका लोकप्रिय आर्य मर्यादाओं का समाचार पत्र ''टंकारा समाचार'' इंटरनेट एवम् वट्सअप पर उपलब्ध। सभी सदस्य पाठकों से अनुरोध है कि अपना ई-मेल पता एवम् वट्सअप मोबाइल नम्बर **9560688950** पर **सदस्य संख्या एवम् नाम सहित** भेजे ताकि हम पंजीकृत कर सके जिससे कि आपको उपरोक्त माध्यम से जोड़ा जा सके। **- ट्रस्ट मन्त्री एवम् सम्पादक**

अंतराष्ट्रीय योग दिवस के उपलक्ष्य में

योग का अर्थ आत्मा को परमात्मा के साथ मिलाना

योग का अर्थ आत्मा को परमात्मा के साथ मिलाना, इसी संयोग कि अवस्था को समाधि की संज्ञा दी गई है, जो कि जीवात्मा और परमात्मा की समता होती है।

जाने पूर्ण योग क्या है- महर्षि पतंजलि ने योग को 'चित्त की वृत्तियों के निरोध' **(योगाश्चित्तवृत्तिनिरोधः)** के रूप में परिभाषित किया है। अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही योग है। चित्त का तात्पर्य, अन्तःकरण से है। बाह्यकरण ज्ञानेन्द्रियां जब विषयों का ग्रहण करती है, मन उस ज्ञान को आत्मा तक पहुँचाता है। आत्मा साक्षी भाव से देखता है। बुद्धि व अहंकार विषय का निश्चय करके उसमें कर्तव्य भाव लाते है अर्थात् विषय को कार्य रूप देते हैं। इस सम्पूर्ण क्रिया से चित्त में जो प्रतिबिम्ब बनता है, वही वृत्ति कहलाता है। यह चित्त का परिणाम है। चित्त दर्पण के समान है और विषय उसमें आकर प्रतिबिम्बित होता है अर्थात् चित्त विषयाकार हो जाता है, चिन्त विषयों में खो जाता है। इस चित्त को विषयाकार होने से रोकना ही योग है।

महर्षि पतंजलि ने 'योगसूत्र' नाम से योगसूत्रों का एक संकलन किया है, जिसमें उन्होंने पूर्ण कल्याण तथा शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शुद्धि के लिए तथा आत्मा से परमात्मा तक जुड़ने के लिए आठ अंगों वाले योग का एक मार्ग विस्तार से बताया है।

योग के ये आठ अंग हैं- 1. यम, 2. नियम, 3. आसन, 4. प्राणायाम, 5. प्रत्याहार, 6. धारणा, 7. ध्यान, 8. समाधि

साधारण लोग आसन प्राणायाम करने मात्र से स्वयं को योगी मान लेते है लेकिन यह तो योग का अंग भाग मात्र ही है पूर्ण योग तो व्यक्ति को समाधी तक लेकर जाता है ।

यह कैसे सम्भव है?

इस स्थिती को पाने के लिए मनुष्य को पाँच यमो और पाँच नियमों का पालन करना और उन पर चलना चाहिए।

यमः-1. अहिंसा 2. सत्य 3. अस्तेय (चोरी त्याग) 4. ब्रह्मचर्य 5. अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक धन सम्पत्ति इक्ठी न करना)।

पाँच नियम-1. शौच (पवित्रता भीतर और बाहर से) 2. संतोष 3. तप (मन व इन्द्रियों को बल पूर्वक बुराई से रोकना) 4. स्वाध्याय (वेद आदि धार्मिक किताबें पढ़ना) 5. ईश्वर-प्रणिधान (मन आत्मा कर्मो को ईश्वर को समर्पित करना)

इन गुणों को कैसे पायें?

इन गुणों को पाने के लिए आसन-प्रणायाम योग का अभ्यास करें। योग का लगातार अभ्यास करते हुए, मनुष्य प्रत्याहार की स्थिति को प्राप्त करता है अर्थात् मन इन्द्रियाँ वश में आ जाती है। फिर धारणा की स्थिती आरम्भ होती है अर्थात् ईश्वर के गुणों व कृपा का विचार करते हुए ओ३म/ओंकार का जाप करना। फिर ध्यान् अर्थात् निराकार ईश्वर के गुणों का विचार करते हुए ध्यान् लगाने का अभ्यास करना चाहिए। निरंतर अभ्यास से व्यक्ति समाधि की स्थिति को प्राप्त कर सकता है और जीवन में सुख प्राप्त करता हुआ मोक्ष को प्राप्त करता है। यही सभी मनुष्यों का धर्म है जिससे आत्मीय सुख को प्राप्त किया जा सकता है। यही मनुष्य जीवन का एक मात्र लक्ष्य भी है।

योग अध्यात्म और धर्म की पहली सीढ़ी है। वास्तव में योग आध्यात्म के बिना सिद्ध नहीं होता। इसलिए योग आध्यात्मिक ही है, आसन एक पड़ाव है। यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और फिर समाधि ये योग के चरण हैं। जिन्होंने भी योग प्रस्तुत किया सब समाधि तक अपनी बात को ले गए। तो योग शरीर की यात्रा करते हुए समाधि तक ले जाता है। सबसे पहले आचरण में सुधार आवश्यक है, इसलिए यम की स्थापना करे। फिर नियम का व्रत धारण करें, जिससे हमारी दिनचर्या दुरुस्त रहे। इसी तरह आसन से हम अपने तन-मन को साधते हैं। फिर हम क्रमशः प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा और ध्यान के माध्यम से समाधि में विलीन होते हैं। इस मार्ग को पार कर पाना बिना आध्यात्म के सम्भव ही नहीं है। योग आत्मबोध करना है तो योग करें।

पूरी दुनिया में आज लोगों ने माना है कि आध्यात्म के बिना न मन में शान्ति हो सकती है और न हमें जीवन के लक्ष्य के बारे मालूम हो सकता है। इसीलिए सभी धर्मों और संप्रदायों ने आध्यात्म को स्वीकार किया है बेशक इसे नज़रअन्दाज़ किया गया। आध्यात्मीकता को वास्तविक मायने में योग ने पूर्ण किया है। आप देखिए, योग ने हमें जो दिया है वह एक सम्प्रदाय-मुक्त योग दिया है। योग भारतीय-संस्कृति का हो सकता है किसी सम्प्रदाय का नहीं और इतनी स्वच्छंदता आध्यात्म के अलावा पूरे ब्रह्माण्ड में कहीं और नहीं है। योग धर्म की आध्यात्मीक यात्रा है और समाधि से मोक्ष प्राप्त करना जीवन का लक्ष्य।

- (साभार महर्षि पतंजलि योगदर्शन से)

धर्म का सत्य स्वरूप

❑ राजेन्द्र आर्य, भुज (गुजरात)

इस देश में हजारों की संख्या में बड़े-बड़े भव्य मन्दिर हैं, जहाँ लाखों की संख्या में लोगों की कतारें प्रभु के दर्शनार्थ लगी रहती है जहाँ भजन कीर्तन में सम्मिलित होकर लोग भक्ति की गंगा में स्नान करते हैं। इन सबके अलावा लाखों की संख्या में साधु, संत और महात्मा है जो लोगों में धर्मज्ञान का संचार करने में संलग्न है। इसके अतिरिक्त हजारों की संख्या में रामलीला और कृष्णलीला करने वालों की मंडली है जो सुदूर ग्रामीण इलाके तक जाकर इन महापुरुषों के चरित्र का अभिनय कर चरित्र निर्माण की प्रेरणा लोगों में प्रदान करते रहते हैं साथ ही सत्यनारायण व्रत कथा करने वाले पुरोहितों की तो गिनती ही नहीं है जो लोगों में घर-घर कथा कर लोगों में धर्म के प्रति आस्था जगाये रहते हैं।

इतने सारे धर्म स्थापना और धर्मप्रचार के प्रयास और लोगों में धर्म के प्रति प्रतीत होने वाली आस्था के वजह से प्रत्येक नर में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम और प्रत्येक नारी में माता सीता का स्वरुप परीलक्षित होना चाहिए साथ ही पूरे देश का स्वरुप भी रामराज्य के समान होना चाहिए पर वास्तविकता क्या है।

आज लोगों में चरित्रहीनता और कर्त्तव्यहीनता का ग्राफ किसी भी काल के लोगों की तुलना में काफी ऊँचा है। अधर्म का कौन सा ऐसा कर्म है जो बड़े पैमाने पर नहीं होता है। हत्या, लूट, अपहरण, बलात्कार का नंगा नृत्य पूरे देश में देखा जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह कि जितना ही धर्म की स्थापना का प्रयास किया जा रहा है उतना ही लोग धर्म से विमुख होते जा रहे हैं आखिर इसके क्या कारण है इस पर चिन्तन् करना नितान्त् ही आवश्यक है।

इस पर लोगों की धारणा अलग-अलग होगी, कुछ कहेंगे आज लोगों में धर्म के प्रति आस्था घटती जा रही है। कुछ कहेंगे ईश्वर के प्रति विश्वास में कमी हो रही है, कुछ कहेंगे यह सब कलियुग के वजह से हो रहा है। पर हमारा मानना है कि जिस प्रकार कोई रोगग्रस्त व्यक्ति स्वस्थ होने के लिए दवाओं का प्रयोग करता है, पर जब दवा ही नकली हो तो व्यक्ति स्वस्थ होने के जगह पर उसका स्वास्थ्य और ही जीर्ण होता चला जायगा। ठीक उसी प्रकार नकली दवा की भांति आज धर्म शिक्षा नकली दी जा रही है यह सब इसी का दुष्परिणाम है। आज अधिकांश धर्मप्रचारकों द्वारा नकली धर्मशिक्षा का ही प्रचार प्रसार किया जा रहा है। क्योंकि वेद विहीन ज्ञान का वही महत्व है जो प्राणविहीन शरीर का होता है।

आज सर्वत्र वेदों में वर्णित ईश्वर के सत्य स्वरूप की अनदेखी कर काल्पनिक स्वरूप को ही मान्यता प्रदान की जा रही है। वेदों में ईश्वर को सच्चिदानन्द स्वरुप, निराकार, निर्विकार, सर्वव्यापक, अजर, अमर, नित्य, अजन्मा, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता बताया गया है। इन मान्यताओं के विपरीत ईश्वर को भी जन्म मरणा के बन्धन में बाँधकर इसे कर्मफलदाता के जगह पर कर्मफल भोक्ता बना दिया गया है। उसके निराकार स्वरुप के बदले उसे आकार देकर भिन्न-भिन्न प्रकार की मूर्तियों में ढालकर उसकी पूजा अर्चना की जा रही है इतना ही नहीं अपने द्वारा निर्मित वेजान मूर्तियों में प्राण का झूठा स्वांग रचकर सर्वशक्तिमान ईश्वर का ही उपहास किया जा रहा है। हमारी दृष्टता देखिए कि हमारे अपने प्राण का कोई ठिकाना नहीं कि पता नहीं हम अगला सांस ले सकेंगे या फिर यही हमारा अन्तिम सांस होगा और हम लगे हुए हैं स्वयं द्वारा निर्मित वेजान मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा करने में और जिन मूर्तियों में ईश्वर ने प्राणप्रतिष्ठा की है उसे मार-मार कर धरती को ही जीवन विहीन करने में हम तुले हुए हैं। इतना ही नहीं अपने पापकर्मों में ईश्वर को भी हमने सहभागी बना लिया है। मन्दिरों में स्थापित देवमूर्तियों के समक्ष अपने तुच्छ कल्याण के खातिर निरीह पशुओं की बलि! क्या ईश्वर को भी पाप का भागी बनाना नहीं है, क्या कोई धर्माचार्य इसके औचित्य को धर्मयुक्त साबित कर सकते हैं, क्या उन पशुओं को किसी दूसरे भगवान ने रचा है।

सिर्फ ईश्वर के नकल स्वरुप की ही बात नहीं है, हमने आज सभी कुछ नकली ही धारण कर लिया है। यथा नकली धार्मिकता, नकली आध्यात्मिकता, नकली सात्विकता इत्यादि ।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्

अर्थात् मनुष्य को अपने कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है, कोई भी धर्माचार्य पैगम्बर, मुल्ला, पंडा मनुष्य को उसके कर्मों के फल के भोग से नहीं बच सकते क्योंकि ईश्वर के पास क्षमा नहीं है और वह न्यायकारी है। इसलिए अच्छे कर्मों का अच्छा फल और बुरे कर्मों का बुरा फल मिलेगा ही। कुछ कर्मों के फल जन्मान्तर में मिलते हैं।

इसके विपरीत आज पाप काटने के लिए बहुत से कल्पित उपाय प्रस्तुत कर दिए गए हैं। लोगों में यह धारणा फैला दी गई है कि व्रत, गंगास्नान और शिवलिंग पर जलाभिषेक के द्वारा पाप कटते हैं, अर्थात् पापकार्यों के फल के भोग से बचा जा सकता है। जिस प्रकार जब महिलाओं में गर्भधारण से बचने के लिए कृत्रिम साधन उपलब्ध करा दिए गए हैं तो फिर उन्हें क्या जरूरत है संयम और मर्यादा पालन करने की। ठीक इसी प्रकार जब लोगों में पाप काटने के सुलभ उपाय उपलब्ध करा दिए गए हैं तो फिर क्या जरूरत है उन्हें पापकर्मों से डरकर दूर रहने की। इसकी सत्यता के लिए सावन के महीने में देवघर इत्यादि तीर्थस्थानों पर लोगों की पाप काटने के उद्देश्य से उमड़ती भीड़ को देखा जा सकता है।

इसी प्रकार आज लोगों में सात्विकता का सर्वथा अभाव देखा जा सकता है। दिन रात, माँस, मछली, मुर्गे, अंडे और शराब में लिप्त लोग कुछ विशेष मौके पर सात्विक बन जाते हैं जैसे सावन के महीने में जलाभिषेक एवं छठ पर्व के मौके पर दो चार दिन के लिए लोग नकली सात्विक बन जाते हैं। क्या सात्विकता कि जरूरत मात्र 2-4 दिन के लिए ही है? हम किसे धोखा देना चाहते हैं क्या उसे जिसकी नजर हमारे प्रत्येक कर्मों पर अदृश्य कैमरे की भाँति लगी हुई है।

इसी प्रकार सत्य विचार और सत्य आचरण से भी हम दूर होते जा रहे हैं। आज हम होते कुछ और हैं और दिखाई कुछ और पड़ना चाहते हैं। सत्यविचार और सत्यआचरण से दूर होने के वजह से हमारे कर्म भी दूषित हो रहे हैं फलस्वरूप परिणाम भी दूषित ही मिल रहे हैं। यही कारण है आज प्राय: सभी दु:खी नजर आते हैं।

PRAGMATIC (VEDIC) VIEW OF LIFE

❑ **Satyavrat Siddhantalankar**

Looking far into the historical perspective in Europe. we find that the Church of Rome dominated the entire hemishere there. Christianity, as expounded by the Church, reigned supreme, Reason was at a discount. Thinking was channelised. Martin Luther was the first man who rebelled against the dominance of the Pope and ushered in the ear of Reformation. Though 'Reason' was installed on the pedestal of human thinking and man was slowly inching out into the realm of freedom of thought, yet the conflict between religion and science, dogmatism and free-thinking continue. On the other hand, divided as the Church was in the form of Roman Catholics and Protestants, they were one as regards their conflict with science. The birth of Protestantism, though having seeds of freedom of thought, did not reconclile itself with scientific concepts which the movement of Reformation had naturally given birth to. Both Roman Cathlics and Protestants, though fighting among themselves, were at daggers drawn against science. Galileo and Bruno, to whom the world is indebted for their scientific discoeries, were put in jail and the latter was burnt alive at stakes for prociaiming his heliocentric theory. This is what happened in the West.

But the history of India tells a different story. Here science developed side by side with religion Materialism, which is the product of Science, has been treated as the handmaid of Spiritualism, which is the product of Religion. As related in the Upanishad, Narad a spiritual disciple, approached Maharshi Sanat Kumar, a spiritual saint, with an humble submission that though he had qualified himself in all the science worth the name, yet the found within himself a void. He felt that having learnt everything that material knowledge could impart, he had gained nothing for the satisfaction of his soul. We are told by the Rishi of Katha Upanishad that Nachiketa was offered all the material wealth, but the rejected it al, saying that treading on that path one develops craving for more and more. In the pursuit of material things of the world, there is no terminus.

But this does not mean that the Vedic view of life totally negtected the material side of life. The Worlds of Matter and the Physical Body were accepted as inescapable realities. The world of matter that we see, and the physical body that we inhabbit, are solid facts. We can neither ignore that material world nor can we neglect the physical body. These are two separate and independent entities and have to be accepted irrespective of the fact whether we are atheists, agnostics or otherwise. Matter in motion, without presuming some power which by itself is not Matter but is the cause of motion in Matter and living body, without presuming some power which by itself in not the body but is the cause of life in the body, is inconceivable. That power which sets movement in Matter and life in the body, we respectively call God and Spirit an atheist or an agnostic may prefer to call it by any other name, but the fact remains that moving matter and living Body presupposes some power which is not matter and not Body but runs into both, the Matter and the Body. Otherwise, how can Matter move Matter and how can body live without the life-giver?

The Vedic concept of life was not one-sided. It was not absolute Spiritualism which treated Matter as a myth, nor was it absolute Materialism which treated Spirit as a superstition. It would be correct to call it by no 'ISM', and, it any thing, it may be called Pragmatism or Realism. After all, all the material objects are there to be enjoyed or made use of not by matter itself, but by living beings who possess Life. Hence, it follows that material objects are there as means, as instruments for us to make use of. They are not, and could not be, ends in themselves. This idea has been beautifully explained in the Upanishad when Yajnyavalkya, after leading a household-life; prepares himself for Vanaprastha Ashram and offers all his future maintenance. Maitreyee asked her husbad of what use this property would be to her which he himself was renouncing? Yajnyavalkya replied that it will be only a means for physical comfort: it will not give the eternal bliss that human being is seeking as the summum bonum of life.

The quintessence of Vedic thought is: Be the enjoyer, not the enjoyed: Be the master, not the slave; Be the subject, not the object; Be in the world, not of the world. This is possible by following the Nishkama Karma which teaching of the Gita: Non-attachment-Nishakama Karma-which means: Be in the world and yet be out of the world, like a lotus in water undrenched by its contact. Gita (3-17) calls such a being as an Atma-rata, Atma-tripta, Atma-tushta. Perfect bliss lies in revelling in the Self; In being filled by the Self; in being satisfied by the Self. In being merged in the Sef, there is no tension, no fear, no want, no craving. This is the end towards which we all move, though halted by diversions in between.

The whole scheme of Vedic life was chalked out on this principle. In Brahmacharya, one prepared oneself to be fit to enjoy the world; in Grihastha, he did enjoy

(Rest on Page 11)

ઋગ્વેદ ગુજરાતી માં

ઋગ્વેદની વ્યાખ્યા (ઋક એટલે સ્થિતિ અને જ્ઞાન) ઋગ્વેદ એ પહેલો વેદ છે જે કાવ્યાત્મક છે. સનાતન ધર્મનો પ્રથમ પ્રારંભિક સ્ત્રોત ઋગ્વેદ છે. **યજુર્વેદ**, સામવેદ અને **અથર્વવેદ** ત્રણેય ઋગ્વેદમાંથી જ રચાયા છે. ઋગ્વેદ એ કાવ્યાત્મક વેદ છે, યજુર્વેદ એ ગદ્ય વેદ છે અને **સામવેદ** એ ગીતમય (ગીત-સંગીત) છે. ઋગ્વેદની રચના ઉત્તર-પશ્ચિમ પ્રદેશમાં ૧૫૦૦ **થી** ૧૦૦૦ બીસી સુધી કરવામાં આવી હતી. ગણવામાં આવે છે. ઋગ્વેદના મંત્રો અને સ્તોત્રોની રચના કોઈ એક ઋષિ દ્વારા કરવામાં આવી નથી. પરંતુ જુદા જુદા સમયમાં જુદા જુદા ઋષિઓ દ્વારા કરવામાં આવ્યું છે. આર્ય રાજનીતિની પરંપરા અને ઈતિહાસ ઋગ્વેદમાં આપવામાં આવ્યો છે.

ઋગ્વેદનો પરિચયઃ-
ઋગ્વેદ વિશે મુખ્ય તથ્યોઃ-
શાખાઓ :-
આ પણ વાંચો

ઋગ્વેદ નો પરિચયઃ-

સમગ્ર ઋગ્વેદમાં **૧૦** મંડલ,૧૦૨૮ સ્તોત્રો અને આ સ્તોત્રમાં **૧૧** હજાર મંત્રો છે. પ્રથમ વિભાગ અને દશમું મંડળ અન્ય તમામ મંડળો કરતાં મોટું છે. આમાં સ્તોત્રોની સંખ્યા પણ ૧૯૧ છે. ઋગ્વેદનો શ્રેષ્ઠ ભાગ બીજા મંડલથી સાતમા મંડલ સુધીનો છે. ઋગ્વેદના આઠમા મંડલની શરૂઆતમાં૫૦ સ્તોત્રો પ્રથમ મંડલા જેવા જ હોવાનો અર્થ ધરાવે છે.

ઋગ્વેદના દસમા મંડલમાં દવાઓનો ઉલ્લેખ છે. તેમાં ૧૨૫ દવાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તે૧૦૭ જગ્યાએ મળવાનો ઉલ્લેખ છે. સોમ ઔષધનું વર્ણન ઋગ્વેદમાં વિશેષ સ્થાને જોવા મળે છે. ઘણા ઋષિઓ દ્વારા રચિત ઋગ્વેદના શ્લોકોમાં અંદાજિત૪૦૦ સ્તુતિઓ જોવા મળે છે. આ સ્તોત્રમાં સૂર્યદેવ, ઇન્દ્રદેવ, અગ્નિદેવ, વરુણદેવ, વિશ્વદેવ, રુદ્રદેવ, સવિતા વગેરે દેવતાઓની સ્તુતિનું વર્ણન છે. આ સ્તુતિ દેવી-દેવતાઓને સમર્પિત છે.

ઋગ્વેદ વિશે મુખ્ય તથ્યોઃ-

1 ઋગ્વેદની વ્યાખ્યા રિક એટલે સ્થિતિ અને જ્ઞાન.

2. ઋગ્વેદ એ સનાતન ધર્મનો પ્રથમ વેદ છે, અને સૌથી પ્રાચીન સ્ત્રોત ઋગ્વેદ છે.

3. ઋગ્વેદમાં ૧૦ મંડલ છે, જેમાં ૧૦૨૮ સ્તોત્રો છે, અને કુલ ૧૦૫૮૦, મંત્રો છે. આમાંના કેટલાક વર્તુળો નાના છે, અને કેટલાક મોટા છે.

4. ઋગ્વેદના ઘણા સ્તોત્રોમાં, દેવતાઓની સ્તુતિ માટેના મંત્રો છે. ગ્વેદમાં અન્ય પ્રકારના સ્તોત્રો છે, પરંતુ દેવતાઓની સ્તુતિના સ્તોત્રો મુખ્ય છે.

5. ઋગ્વેદમાં, ઇન્દ્રને બધા દ્વારા સ્વીકારવા માટે સૌથી શક્તિશાળી દેવતા માનવામાં આવે છે. ઈન્દ્રની સ્તુતિમાં ઋગ્વેદમાં ૨૫૦ મંત્રો છે.

6. આ વેદમાં દેવતાઓની ૩૩ શ્રેણીઓનો ઉલ્લેખ છે. સૂર્ય, ઉષા અને અદિતિ જેવી દેવીઓનું વર્ણન પણ ઋગ્વેદમાં જોવા મળે છે.

7. ઋગ્વેદનો પ્રથમ મંડલ અને છેલ્લો મંડલ બંને સમાન રીતે વિશાળ છે. તેમાંના સ્તોત્રોની સંખ્યા પણ ૧૯૧ છે.

8. ઋગ્વેદમાં વેદ વ્યાસ ઋષિ દ્વારા બે વિભાગો છે, અષ્ટક ક્રમ અને મંડલ ક્રમ.

વિભાગ :-

વેદ અગાઉ સંહિતામાં હતા, પરંતુ વ્યાસ ઋષિએ તેનો અભ્યાસ કર્યો, સરળતા ખાતર, વેદોને ચાર ભાગમાં વહેંચવામાં આવ્યા. આ વિભાજનને કારણે તેમનું નામ વેદ વ્યાસ પડ્યું. ઋગ્વેદ બે ક્રમમાં વહેંચાયેલો છે. (લોકપ્રિય અભિપ્રાય મુજબ)

ઋગ્વેદનું બે ભાગમાં વિભાજન :-

1. ઓક્ટલ ક્રમ અને
2. ઘટનાક્રમ

1. ઓક્ટેવ ક્રમ :-

ઋગ્વેદના અષ્ટક ક્રમમાં, આઠ અષ્ટક અને દરેક અષ્ટકને અલગ-અલગ આઠ અધ્યાયમાં વહેંચવામાં આવ્યા છે. દરેક પ્રકરણ વિભાગોમાં વિભાજિત થયેલ છે. વર્ગોની કુલ સંખ્યા ૨૦૦૦ છે.

2. ઘટનાક્રમ :-

ઋગ્વેદના મંડલ ક્રમમાં, સંયુક્ત ગ્રંથોને ૧૦ મંડલમાં વહેંચવામાં આવ્યા છે. મંડળ અનુવાક, અનુવાક સૂક્ત અને સૂક્ત મંત્રમાં વિભાજિત છે. દસ મંડળોમાં ૮૫ અનુવાક, ૧૦૨૮ સૂક્ત છે. અને ૧૧ બાલખિલ્ય સ્તોત્રો પણ જોવા મળે છે. હાલમાં ઋગ્વેદમાં ૧૦૬૦૦ મંત્રો જોવા મળે છે.

ઋગ્વેદનો પ્રથમ મંડલ ઘણા ઋષિઓ દ્વારા રચવામાં આવ્યો હોવાનું માનવામાં આવે છે. પરંતુ બીજું મંડલ **ઋષિ ગ્રિતસમાયા** દ્વારા રચાયેલ છે, ત્રીજું મંડલ **ઋષિ વિશ્વામિત્ર** દ્વારા રચાયેલ છે, ચોથું મંડલ **વામદેવ** દ્વારા રચિત છે, પાંચમું મંડલ **અત્રિઋષિ** દ્વારા રચિત છે, છઠ્ઠું મંડલ **ઋષિ ભારદ્વાજ** દ્વારા રચાયેલ છે, સાતમું મંડલ **વશિષ્ઠ ઋષિ** દ્વારા રચિત છે, આઠમું મંડલ **ઋષિ અંગિરા** દ્વારા રચિત છે. નવમું અને દસમું મંડલ એક કરતાં વધુ ઋષિઓ દ્વારા રચાયેલ છે. પુરુરવા અને ઉર્વશીનો સંવાદ ઋગ્વેદના દસમા મંડલના ૯૫ સ્તોત્રોમાં જોવા મળે છે.

अत्याचारी व्यक्ति जीवन में दु:ख का ही भागी बनता है

❑ डॉ. विवेक आर्य

बाबर और औरंगजेब ने अपने जीवन में हिन्दू जनता पर अनेक अत्याचार किये थे। मुस्लिम उनकी धर्मान्ध नीति का बड़े उत्साह से गुण गान करते हैं पर सत्य यह है कि अपनी मृत्यु से पहले दोनों को अपने जीवन में किये गए गुनाहों का पश्चाताप् था। अपने पुत्रों को लिखे पत्रों में उन्होंने अपनी व्यथा लिखी है।

बाबर ने जीवन भर मतान्धता में हिन्दुओं पर अनेक अत्याचार किये। एक समय तो ऐसा आया की हिन्दू जनता बाबर के कहर से त्राहि माम कर उठी।

बाबर की मतान्धता को गुरु नानक जी की जुबानी हम भली प्रकार से जान सकते हैं। भारत पर किये गये बाबर के आक्रमणों का नानक ने गंभीर आकलन किया और उसके अत्याचारों से गुरु नानक मर्माहत भी हुए। उनके द्वारा लिखित बाबरगाथा नामक काव्यकृति इस बात का सबूत है कि मुग़ल आक्रान्ता ने किस तरह हमारे हरे-भरे देश को बर्बाद किया था।

बाबरगाथा के पहले चरण में लालो बढ़ई नामक अपने पहले आतिथेय को संबोधित करते हुए नानकदेव ने लिखा है:-

हे लालो, बाबर अपने पापों की बरात लेकर हमारे देश पर चढ़ आया है और ज़बर्दस्ती हमारी बेटियों के हाथ माँगने पर आमादा है। धर्म और शर्म दोनों कहीं छिप गये लगते हैं और झूठ अपना सिर उठा कर चलने लगा है। हमलावर लोग हर रोज़ हमारी बहू-बेटियों को उठाने में लगे हैं, फिर जबर्दस्ती उनके साथ निकाह कर लेते हैं। काज़ियों या पण्डितों को विवाह की रस्म अदा करने का मौका ही नहीं मिल पाता। हे लालो, हमारी धरती पर खून के गीत गाये जा रहे हैं और उनमे लहू का केसर पड़ रहा है। लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि बहुत जल्दी ही मुग़लों को यहाँ से विदा लेनी पड़ेगी, और तब एक और मर्द का चोला जन्म लेगा।

कविता के दूसरे चरण में नानक ने लिखा-हे ईश्वर, बाबर के शासित खुरासान प्रदेश को तूने अपना समझ कर बचा रक्खा है और हिन्दुस्तान को बाबर द्वारा पैदा की गयी आग में झोंक दिया है। मुगलों को यम का रूप प्रदान कर उनसे हिन्दुस्तान पर हमला करवाया और उसके परिणामस्वरूप यहाँ इतनी मारकाट हुई कि हर आदमी उससे कराहने लगा। तेरे दिल में क्या कुछ भी दर्द नहीं है?

तीसरे चरण का सारांश है-जिन महिलाओं के मस्तक पर उनके बालों की लटें लहराया करती थीं और उन लटों के बीच जिनका सिन्दूर प्रज्ज्वलित और प्रकाशमान रहता था, उनके सिरों को उस्तरों से मूंड डाला गया है और चारों ओर से धूल उड़ उड़ कर उनके ऊपर पड़ रही है। जो औरतें किसी ज़माने में महलों में निवास करती थीं उनको आज सड़क पर भी कहीं ठौर नहीं मिल पा रही है। कभी उन स्त्रियों को विवाहिता होने का गर्व था और पतियों के साथ वह प्रसन्नता के साथ अपना जीवन-यापन करती थीं। ऐसी पालकियों में बैठ कर वह नगर का भ्रमण करती थीं जिन पर हाथी दाँत का काम हुआ होता था। आज उनके गलों में फांसी का फन्दा पड़ा हुआ है और उनके मोतियों की लड़ियाँ टूट चुकी हैं।

चौथे चरण में एक बार फिर सर्वशक्तिमान् का स्मरण करते हुए नानक ने कहा है-

यह जगत निश्चित ही तेरा है और तू ही इसका अकेला मालिक है। एक घड़ी में तू इसे बनाता है और दूसरी घड़ी में इसे नष्ट कर देता है। जब देश के लोगों ने बाबर के हमले के बारे में सुना तो उसे यहाँ से भगाने के लिये पीर-फकीरों ने लाखों टोने-टोटके किये, लेकिन किसी से भी कोई फ़ायदा नहीं हो पाया। बड़े बड़े राजमहल आग की भेंट चढ़ा दिये गये, राजपुरूषों के टुकड़े-टुकड़े कर उन्हें मिट्टी में मिला दिया गया। पीरों के टोटकों से एक भी मुग़ल अंधा नहीं हो पाया। मुगलों ने तोपें चलायीं और पठानों ने हाथी आगे बढ़ाये। जिनकी अर्ज़ियाँ भगवान के दरबार में फाड़ दी गयी हों, उनको बचा भी कौन सकता है? जिन स्त्रियों की दुर्दशा हुई उनमें सभी जाति और वर्ग की औरतें थीं। कुछ के कपड़े सिर से पैर तक फाड़ डाले गये, कुछ को श्मशान में रहने की जगह मिली। जिनके पति लम्बे इन्तज़ार के बाद भी अपने घर नहीं वापस लौट पाये, उन्होंने आखिर अपनी रातें कैसे काटी होंगी?

ईश्वर को पुन: संबोधित करते हुए गुरू नानकदेव ने कहा था-तू ही सब कुछ करता है और तू ही सब कुछ कराता है। सारे सुख-दुख तेरे ही हुक्म से आते और जाते हैं, इससे किसके पास जाकर रोया जाये, किसके आगे अपनी फ़रियाद पेश की जाये? जो कुछ तूने लोगों की किस्मत में लिख दिया है, उसके अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ हो ही नहीं सकती। इससे अब पूरी तरह तेरी ही शरण में जाना पड़ेगा। उसके अलावा अन्य कोई पर्याय नहीं।

सन्दर्भ- स्टॉर्म इन पंजाब क्षितिज वेदालंकार

बाबर मतान्धता में जीवन भर अत्याचार करता रहा। जब अंत समय निकट आया तब उसे समझ आया की मतान्धता जीवन का उद्देश्य नहीं अपितु शांति, न्याय, दयालुता, प्राणी मात्र की सेवा करना ही जीवन का उद्देश्य है। अपनी मृत्यु से पहले बाबर की आँखें खुली, उसे अपने किये हुए अत्याचार समझ में आये। अपनी गलतियों को समझते हुए उसने अपने बेटे हुमायूँ को एक पत्र लिखा जिसे यहाँ उधृत किया जा रहा है।

जहीरुद्दीन मोहम्मद बादशाह गाज़ी का गुप्त मृत्यु पत्र राजपुत्र नसीरुद्दीन मुहम्मद हुमायूँ के नाम जिसे खुदा जिंदगी बक्शे सल्तनत की मजबूती के लिए लिखा हुआ। ए बेटे हिंदुस्तान की सल्तनत मुखतलीफ़ मज़हबों से भरी हुई है। खुदा का शुक्र हैं की उसने तुझे उसकी बादशाही बक्शी है। तुझ पर फर्ज है कि अपने दिल के परदे से सब तरह का मज़हबी तअस्सुब धो डाल। हर मज़हब के कानून से इंसाफ कर। खास कर गौ की कुरबानी से बाज आ जिससे तू लोगों के दिल पर काबिज़ हो सकता है और इस मुल्क की रियाया तुझसे कादारी से बंध जाएगी। किसी फिरके के मंदिर को मत तोड़ जोकि हुकूमत के कानून का पायबंद हों। इन्साफ इस तरह कर कि बादशाह से रियाया और रियाया से बादशाह खुश रहे। उपकार की तलवार से इस्लाम का काम ज्यादा फतेयाब होगा बनिस्पत जुल्म की तलवार के। शिया और सुन्नी के फरक को नजरंदाज कर वरना इस्लाम की कमजोरी जाहिर हो जाएगी और मुख्तलिफ विश्वासों की रियाया को चार तत्वों के अनुसार (जिनसे एक इन्सानी जिस्म बना हुआ है) एक रस कर दे, जिससे बादशाहत का जिस्म तमाम

बीमारियों से महफूज रहेगा। खुश किस्मत तैमुर का याददाश्त सदा तेरी आँखों के सामने रहे जिससे तू हुकूमत के काम में अनुभवी बन सके। इस मृत्यु पत्र पर तारीख 1 जमादिल अव्वल सन् 395 हिज्री लिखा है।

सन्दर्भ- अलंकार मासिक पत्रिका, 1924 मई अंक

हुमायूँ ने अपने पिता बाबर की बात को कई मायने में अनुसरण किया। उसके बाद अकबर ने भी इस बात को नजरअंदाज नहीं किया। इसी से अकबर का राज्य बढ़ कर पूरे हिंदुस्तान में फैल सका था। बाद के मुग़ल शराब, शबाब के ज्यादा मुरीद बन गए थे।

जब औरंगजेब का काल आया तो उसने ठीक इसके विपरीत धर्मान्ध नीति अपनाई। पहले गद्दी पाने के लिए अपने सगे भाइयों को मारा। फिर अपने बाप को जेल में डालकर प्यासा और भूखा मार डाला। मद में चूर औरंगजेब ने हिन्दुओं पर बाबर से भी बढ़कर अत्याचार किये। जिससे उसी के जीवन में अपनी चरम सीमा तक पहुँचा मुग़ल साम्राज्य का पतन आरंभ हो गया।

औरंगजेब के अत्याचार से हिन्दू वीर उठ खड़े हुए। महाराष्ट्र में वीर शिवाजी, पंजाब में गुरु गोविन्द सिंह, राजपूताने में वीर दुर्गादास राठोड़, बुंदेलखंड में वीर छत्रसाल, भरतपुर और मथुरा में जाट सरदार, असम में लचित बोरफुकन। चारों ओर से औरंगजेब के विरुद्ध उठ रहे विद्रोह को दबाने में औरंगजेब की संगठित सारी शक्ति खत्म हो गयी। न वह जिहादी उन्माद में हिन्दुओं पर अत्याचार करता, न उसके विरोध में हिन्दू संगठित होकर उसका प्रतिरोध करते। उसका मज़हबी उन्माद ही मुगलिया सल्तनत के पतन का कारण बना। अपनी मृत्यु से कुछ काल पहले औरंगजेब को अक्ल आई तो उसने अपने मृत्यु पत्र में अपने बेटों से उसका बखान इस प्रकार किया है।

शहजादे आज़म को औरंगजेब लिखता है-बुढ़ापा आ गया, निर्बलता ने अधिकार जमा लिया और अंगों में शक्ति नहीं रही। मैं अकेला ही आया, और अकेला ही जा रहा हूँ। मुझे मालूम नहीं की मैं कौन हूँ और क्या करता रहा हूँ। जितने दिन मैंने इबादत में गुजारे हैं, उन्हें छोड़कर शेष सब दिनों के लिए मैं दुखी हूँ। मैंने अच्छी हुकूमत नहीं की और किसानों का कुछ नहीं बना सका। ऐसा कीमती जीवन व्यर्थ ही चला गया। मालिक मेरे घर में था पर मेरी अन्धकार से आवृत आँखें उसे न देख सकी।

छोटे बेटे कामबख्श को बादशाह ने लिखा था- मैं जा रहा हूँ और अपने साथ गुनाहों और उनकी सजा के बोझ को लिये जा रहा हूँ। मुझे आश्चर्य यही है कि मैं अकेला आया था, परन्तु अब इन गुनाहों के काफिले के साथ जा रहा हूँ। मुझे इस काफिले का खुदा के सिवाय कोई रहनुमा नहीं दिखाई देता। सेना और बारबरदारी की चिंता मेरे दिल को खाये जा रही हैं।

(सन्दर्भ मुग़ल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण- इन्द्र विद्या वाचस्पति)

अलमगीर यानि खुदा के बन्दे के नाम से औरंगजेब को मशहूर कर दिया गया जिसका मुख्य कारण उसकी धर्मान्धता थी। पर सत्य यह है कि हिन्दुओं पर अत्याचार करने के कारण अपराध बोध उसे अपनी मृत्यु के समय हो गया था।

इस लेख को लिखने का मेरा उद्देश्य बाबर या औरंगजेब के विषय में अपने विचार रखना नहीं हैं अपितु यह सन्देश देना है कि अत्याचारी व्यक्ति जीवन में दु:ख का ही भागी बनता है। यही अटल सत्य है और सदा रहेगा। - नजफगढ़, दिल्ली

(Rest of Page 09)

the world to his hearts content; ion Vanaprastha, the terminus was reached when he become conscious by experience of the ephemeral charactr of the mundane attachments to life: and, lastly, came Sanyas, when he detached himself off from the small, petty grooves in which he had been moving all his life. He detached himself from his family, from his caste, from his society, and even from his country. Renouncing all, he became of all. At this stage, he become the citizen of the world, for whom every man was his brother, every family was his family, every society was his society and every country was his country. In this detachment oriented-attachment and expansion of the Self, he fulfilled the destiny for which the human body is given as a gift by the Almighty:

- From the book 'Reminiscences and Reflection of A Vedic Schoar'

एक प्रेरणा परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं अथवा गुरुकुल के एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय देवें

अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा, जहां इस समय 110 ब्रह्मचारी अध्ययनरत हैं, जिन्हें वैदिक मान्यताओं के प्रचार एवं कर्मकाण्डीय संस्कारों हेतु तैयार किया जाता है। आज की आवश्यकता है कि सुयोग्य धर्माचार्यों की संख्या अधिक से अधिक हो। आप सभी दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि अपनी आने वाली पीढ़ी को वैदिक संस्कारों से ओत-प्रोत करने हेतु इन ब्रह्मचारियों के एक वर्ष के अध्ययन का व्यय दान स्वरूप ट्रस्ट को दें। यह ऋषि ऋण से उऋण होने में आपकी आहुति होगी। **एक ब्रह्मचारी का एक वर्ष का अध्ययन/वस्त्र/खानपान का व्यय 20,000/- रुपये है।** आपसे प्रार्थना है कि अपनी ओर से अथवा अपनी संस्थाओं की ओर से कम से कम एक ब्रह्मचारी के अध्ययन व्यय की सहयोग राशि **'श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा'** के नाम चैक/ ड्राफ्ट केवल खाते में दिल्ली कार्यालय के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

निवेदकः- योगेश मुंजाल (कार्यकारी प्रधान) **अजय सहगल** (मन्त्री)

सुख-दु:ख का जनक कौन?

❒ कन्हैयालाल लोढ़ा

प्राय: सभी की यह मान्यता है कि हमारे सुख-दु:ख का कारण वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति आदि अन्य घटक हैं। परन्तु जब व्यक्ति अपने सुख-दु:ख का कारण अपने को नहीं मानकर किसी अन्य वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति व अवस्था को मान लेता है तो उसका सुख-दु:ख 'पर' अर्थात् अन्य पर आश्रित हो जाता है, वह पराश्रित हो जाता है। पराश्रित होना पराधीन होना है। पराधीनता अपने आप में बड़ा दु:ख है। पराधीनता किसी भी प्राणी को किसी भी काल में अभीष्ट नहीं है। अत: पराधीनता के दु:ख से बचना है तो सुख-दु:ख का कारण अन्य को मानना त्यागना ही होगा।

जब प्राणी अपने दु:ख का कारण दूसरे को मान लेता है तो उसका भयंकर परिणाम यह होता है कि जिस दु:ख को सदा के लिए मिटा सकता है, उसे मिटाने में भी अपने को पराधीन मान लेता है। पराधीन होने पर दु:ख का दूर होना तो दूर, उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है।

यह मानना कि अपने सुख-दु:ख का कारण अन्य है अर्थात् वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, अवस्था आदि है, युक्तियुक्त नहीं है। कारण कि यदि हमें अन्य कोई दु:ख दे सकता है तो दु:ख मिटाने में हम पराधीन हो गये, फिर दु:ख मिट ही नहीं सकता। अत: दु:ख अन्य कोई दे ही नहीं सकता, क्योंकि जगत् स्वयं सतत् परिवर्तनशील है, पर प्रकाश्य है और जगत् के पदार्थों में दु:ख है ही नहीं, परमात्मा में दु:ख है ही नहीं। अत: जगत् और परमात्मा भी दु:ख नहीं दे सकते। जिसके पास जो वस्तु है ही नहीं, वह उसे कैसे दे सकता है। अत: यह मानना पड़ता है कि अपने दु:ख का कारण अन्य कोई भी नहीं है। उदाहरणार्थ-'क' व्यक्ति ने किसी को गाली दी कि 'तुम गधे हो' यह गाली वहाँ खड़े सैकड़ों व्यक्तियों ने सुनी, परन्तु उन सैकड़ों व्यक्तियों को गाली से दु:ख नहीं होगा, दु:ख केवल उसी व्यक्ति को होगा जो गाली को सुनकर यह मानेगा कि इसने 'गधा' कहकर मेरा अपमान किया है। जिसने यह मान लिया कि इसके कहने से मैं गधा नहीं हो गया, मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ा उसे दु:ख नहीं होगा। यदि यही वाक्य अंग्रेजी में कहा- You are a donkey और सुनने वाला अंग्रेजी नहीं जानता है तो उसे दु:ख नहीं होगा अथवा वही वाक्य 'तुम गधे हो' पिता ने अपने शिशु को कहा तो वह बुरा नहीं मानेगा, प्रत्युत मुस्करायेगा। विवाहोत्सव पर ससुराल में स्त्रियाँ वर व वर के परिवारवालों को गीतों में गालियाँ देती हैं, परन्तु उन गालियों को कोई बुरा नहीं मानता। यदि गाली दु:ख देती तो गाली सुनने वाले सबको समान रूप से दु:ख होता, सब काल में होता, सब परिस्थितियों में होता। परन्तु ऐसा नहीं देखा जाता। इससे यह प्रमाणित होता है कि गाली देने की घटना दु:ख का कारण नहीं है।

दूसरा उदाहरण लें। मान लें कि मेरे पास पचास हजार रूपये हैं, उन रूपयों को किसी ने मेरे से छीन लिया तो मुझे घोर दु:ख होगा। यदि ये रूपये किसी बैंक के हैं जिन्हें मैं उसी बैंक की किसी शाखा में या अन्य बैंक में बैंक कर्मचारी के रूप में जमा कराने जा रहा हूँ फिर वे रूपये मेरे से छिन जावें तो मुझे पहली बार छिनने से जितना दु:ख हुआ दूसरी बार उतना दु:ख नहीं होगा। यदि मैंने अपने पचास हजार रूपये देकर किसी जौहरी से एक नगीना खरीद लिया और उस जौहरी से मेरे सामने ही पचास हजार रूपये छीन लिए गये तो रूपये छिनने का अब मुझे दु:ख नहीं होगा। यदि रूपये छिनने की घटना से 'दु:ख' होने का संबंध होता तो तीनों ही अवस्थाओं में समान दु:ख होना चाहिए था, परन्तु ऐसा नहीं होता। होता यह है कि जिस वस्तु से हमने जितना गहरा संबंध जोड़ रखा है, उतना ही गहरा दु:ख उसके वियोग से होता है। यह दु:ख घटना के कारण नहीं होता है, प्रत्युत घटना के प्रति प्रतिक्रिया करने से होता है। यही कारण है कि एक घटना को हजारों लाखों लोग प्रतिदिन रेडियो, टेलीविजन, समाचार-पत्र आदि से जानते हैं, देखते हैं, उन सब पर उस घटना का सुख-दु:ख रूप प्रभाव भिन्न-भिन्न रूप में पड़ता है, एकसा प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि घटना या परिस्थिति ही दु:ख-सुख का कारण होती तो सबको समान सुख-दु:ख होता, परन्तु ऐसा नहीं होता है। इससे सिद्ध होता है कि परिस्थिति या घटना सुख-दु:ख का कारण नहीं है।

हम एक उदाहरण और लें। किसी स्त्री के प्रियतम पति की किसी दुर्घटना में, विदेश में मृत्यु हो गई। उस स्त्री को दूसरे दिन मृत्यु का समाचार मिला। समाचार मिलते ही दु:ख का वज्रपात हो गया। असह्य दु:ख हुआ। यदि दु:ख का संबंध उसके पति की मृत्यु की घटना से होता तो पति की मृत्यु तो पहले दिन ही दुर्घटना में हो गयी थी। अत: उसी समय दु:ख होना चाहिए था। परन्तु मृत्यु के दिन दु:ख नहीं हुआ तथा इस घटना से जितना दु:ख पत्नी को हुआ उतना दु:ख पुत्र को नहीं हुआ, पुत्र को जितना दु:ख हुआ उतना पड़ौसी को नहीं हुआ। पड़ौसी को जितना दु:ख हुआ उतना नगर के अन्य नागरिकों को नहीं हुआ। जिन्होंने मृत्यु लेखा पुस्तिका में उसकी मृत्यु का नामांकन किया, उन्हें बिल्कुल ही दु:ख नहीं हुआ। यही नहीं, जो पति का दुश्मन था उसे सुख हुआ, दु:ख हुआ ही नहीं। इससे तात्पर्य यह निकलना कि घटना दु:ख का कारण नहीं है, क्योंकि घटना यदि दु:ख का कारण होती तो दु:ख घटना घटते ही हो जाता। दु:ख हुआ घटना की जानकारी मिलने पर, उस जानकारी मिलने पर, उस जानकारी की प्रतिक्रिया करने पर, जिसने जैसे और जितनी प्रतिक्रिया की, उसे वैसे ही उतना ही दु:ख या सुख हुआ। आइए न्यायाधीश का उदाहरण लें। न्यायाधीश का एक ही निर्णय सुनकर एक पक्ष हर्ष विभोर हो जाता है और दूसरा पक्ष दु:ख सागर में डूब जाता है और न्यायालय के कर्मचारियों को न दु:ख होता है और न सुख। इससे स्पष्ट होता है कि घटना से सुख दु:ख नहीं होता।

विश्व में प्रतिक्षण असंख्यात घटनाएं घट रही हैं, सैकड़ों व्यक्तियों की दुर्घटनाएँ या रोग से मृत्यु हो रही है, कितने ही दु:खी होकर आत्म-हत्या कर रहे हैं। सैकड़ों-हजारों व्यक्ति हर्ष-समारोह मनाकर आनंदित हो रहे हैं। यदि इन सब घटनाओं का सुख-दु:ख रूप प्रभाव पड़ने लगे तो व्यक्ति एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। यही नहीं, जो व्यक्ति स्वयं घटना के प्रति प्रतिक्रिया कर सुखी-दु:खी हो रहा है उसका वह सुख अथवा भयंकर दु:ख भी सदा बना रहता है, अपितु धीरे धीरे घटता जाता है और एक दिन वह सुख-दु:ख विस्मृति के महागर्त में समा जाता है। कोई भी सुख-दु:ख सदा नहीं रहने वाला है। कारण कि सुख-दु:ख का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व ही नहीं है। वह व्यक्ति की मान्यता, कल्पना या प्रतिक्रिया का परिणाम मात्र है।

यदि किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थित, घटना में सुख या दु:ख निहित होता तो उस वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के रहने निरन्तर वह सुख या दु:ख होता रहता, परन्तु कोई सुख या दु:ख एक क्षण भी एक-सा नहीं रहता। उसमें क्षण-क्षण परिवर्तन होता ही रहता है। उदाहरण के लिए उस एक विदेशी को लें जो भारत के ताजमहल की प्रशंसा सुनकर हजारों रूपये व्यय करके ताजमहल देखने आया। उसे ताजमहल देखने में सुख हुआ। परन्तु प्रतिक्षण वह सुख घटता गया और दो-तीन घंटे में तो यह स्थिति हो गई कि उसे ताजमहल देखने में कोई सुख नहीं रह गया और वह वहाँ से चलने की तैयारी करने लगा।

कारण-कार्य संबंध का यह नियम है कि कारण की समान स्थिति रहते हुए कार्य निष्पत्ति बराबर होती ही रहती है, जैसे जब तक विद्युत की लहर आती रहती है और यन्त्र की स्थिति यथावत् रहती है, तब तक उससे चलने वाले यंत्र, रेडियो, टेलीविजन, पंखा बराबर उसी प्रकार समान रूप से चलते रहते हैं, क्योंकि उनमें कारण-कार्य संबंध विद्यमान है। परन्तु सुख-दु:ख के विषय में यह बात नहीं देखी जाती है। जिस वस्तु, परिस्थिति या घटना को वह अपने दु:ख-सुख का हेतु मानता है, उसके यथावत् विद्यमान रहने पर भी सुख-दु:ख में परिवर्तन चलता रहता है। इससे यह स्पष्ट है कि वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, अवस्था, घटना आदि सुख-दु:ख के कारण नहीं है। सुख-दु:ख का कारण हमारी स्वयं की अज्ञान जनित मान्यता है। इसे एक उदाहरण से समझें-जैसे सर्प को कोई व्यक्ति लाठी से मारता है तो सर्प अपने मारने व दु:ख का कारण लाठी को मानता है। जिससे वह अपने फण का प्रहार लाठी पर करता है, लाठी को काटता है। जबकि वास्तविक कारण लाठी चलाने वाला व्यक्ति है, लाठी तो निमित्त कारण है या करण है। जैसे सर्प द्वारा अपनी मार का कारण लाठी को समझना भूल है उसी प्रकार अपने सुख-दु:ख का कारण वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति आदि अन्य को समझना भूल है, ये सब तो निमित्त कारण है। मूल कारण तो अपनी अज्ञानजनित राग-द्वेषात्मक प्रतिक्रिया है। यदि हम प्रतिक्रिया न करें, वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के प्रति उपेक्षा भाव रखें, उदासीन भाव व समता में रहें, तटस्थ या द्रष्टा रहें तो कोई वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति आदि सुख-दु:ख नहीं दे सकती। कारण यह है कि सब अपने से भिन्न हैं पर हैं, अन्य हैं। अत: लेशमात्र भी सुख-दु:ख नहीं दे सकते। दु:खी-सुखी हम स्वयं अपने ही द्वारा की गई प्रतिक्रिया से होते हैं। अत: दु:ख-सुख का कारण अन्य को मानना भ्रान्ति है। इस भ्रान्ति के फलस्वरूप प्राणी दु:ख के मूल कारण अपने दोष पर प्रहार नहीं करता। प्रत्युत दोष के फलस्वरूप में प्राप्त दु:ख को दूर करने का प्रयत्न करता है। उसका यह कार्य वैसा ही है जैसे कोई व्यक्ति कांटों से बचने के लिए बबूल के कांटे तोड़ता रहे, पर बबूल की जड़ को न उखाड़े। बबूल की जड़ को न उखाड़ने से वह व्यक्ति बबूल के पहले के कांटे को दूर करता जायेगा और बबूल के नये कांटे आते रहेंगे और कांटों से छुटकारा कभी न होगा। इसी प्रकार दु:ख की मूल भूल या अज्ञान को दूर न कर विद्यमान दु:ख को दूर करते रहने से नये दु:ख सतत् उत्पन्न होते रहेंगे और दु:ख से छुटकारा कभी भी नहीं होगा। यही कारण है कि सब प्राणी अपना दु:ख दूर करने का अनन्तकाल से प्रयत्न कर रहे हैं, परन्तु दु:ख आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। दु:ख में न कभी आदि और न अंत हुआ, भविष्य में भी इस भूल के रहते अनन्तकाल तक कभी भी दु:ख दूर नहीं होने वाला है।

– (साभार आर्य दर्पण से)

आर्य विद्वानों से अनुरोध

आपका पसंदीदा समाचार **'टंकारा समाचार'** लगभग 29 वर्ष से लगातार प्रकाशित हो रहा है। आपसे प्रार्थना है कि आप अपने सारगर्भित अप्रकाशित लेख एवं कविता हर माह के 1-8 तारीख तक भेज दें ताकि आपका लेख टंकारा समाचार में लग सके।

लेख वेद, स्वामी दयानन्द, योग, स्वास्थ्य एवम् अन्य उपयोगी प्रेरणादायक विषयों पर ही सीमित हो। प्रकाशनार्थ सामग्री टाईप की हुई दो पृष्ठों से अधिक न हो तो सुविधाजनक रहेगा। आप प्रकाशनार्थ सामग्री डाक द्वारा या ईमेल **tankarasamachar@gmail.com** पर हार्ड कॉपी/सॉफ्ट कॉपी भिजवा सकते हैं। इसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी रहूंगा।

अजय, सम्पादक टंकारा समाचार, चलभाष 9810035658
सम्पादकीय कार्यालय: ए-419, डिफेन्स कॉलोनी,
नई दिल्ली-110024

स्वामी श्रद्धानन्द व ईसाई प्रचारक

स्वामी दयानन्द के शिष्य तथा आर्यसमाज के तपोनिष्ठ स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुल कांगड़ी में एक विद्यालय की स्थापना की। यहाँ अन्य विषयों के अलावा वेदान्त् धर्म की शिक्षा भी दी जाती है। एक बार रूड़की के एक अंग्रेज पादरी ने स्वामी जी को लिखा कि ''मैं धर्म प्रचार के लिए हिन्दी सीखना चाहता हूँ। इसके लिए मैं कुछ माह तक गुरुकुल में रहने की अनुमति चाहता हूँ। मैं आपको वचन देता हूँ कि वहाँ निवास के दौरान ईसाई धर्म का प्रचार बिल्कुल नहीं करूँगा।'' कुछ दिन बाद पादरी महोदय को स्वामी श्रद्धानन्द का उत्तर मिला, ''गुरुकुल में आपका स्वागत है। आप हमारे अतिथि बन कर रहेंगे। परन्तु यह भी वचन दीजिए कि गुरुकुल में आप ईसाई धर्म का प्रचार पूरी तरह करेंगे, जिससे हमारे छात्र महात्मा ईसा के जीवन तथा धर्म को भी जान सकें। धर्म आपस में बैर करना नहीं, प्रेम करना सिखाता है।''

पादरी महोदय गुरुकुल आए तो स्वामी जी ने उनके लिए उचित व्यवस्था कर दी और पूर्ण सम्मान के साथ हिन्दी सीखने की सुविधा प्रदान की। गुरुकुल में उन पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। भारतीय धर्मो के बारे में पादरी महोदय की पूर्व धारणाएं मिट गई और वे स्वामी जी के भक्त बन गए। वे जीवन पर्यन्त स्वामी श्रद्धानन्द और गुरुकुल के मित्र तथा शुभचिन्तक् बने रहे।

– साभार पवमान जनवरी 2014

(पृष्ठ 1 का शेष)

लिए ऋषि का जन्म हुआ था। हिन्दु समाज में सबसे बड़ी समस्या वेदों की थी। यहां हर कोई वेदों का नाम लेता था। किन्तु रूढ़ी अर्थ करके कहते थे स्त्रियों और शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है क्योंकि वेदों में लिखा है। बाल विवाह क्यों होने चाहिए वेदों में लिखा है। जन्म से वर्ण व्यवस्था मानी जाये क्योंकि वेदों में लिखा है। ब्राह्मण शूद्र और शूद्र ब्राह्मण नहीं बन सकता है क्योंकि वेदों में लिखा है। हर संस्कृत वाक्य को वेद कहा जाने लगा था और वेदों का प्रमाण देकर वेद मंत्रों के अर्थ का अनर्थ किया जा रहा था। महर्षि दयानन्द जी ने सबसे पहला प्रहार वेदों के अर्थों पर किया। वैदिक अर्थों व ग्रन्थों के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द जी की खोज यह थी कि हर संस्कृत वाक्य व हर संस्कृत ग्रन्थ वेद नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, स्मृति, पुराण, सूत्र ग्रन्थ ये सब वेद नहीं है। इन ग्रन्थों में जो कुछ भी लिखा है वह वेद विरूद्ध है वेदानुकूल नहीं है। ऋषि दयानन्द का हिन्दु समाज से कहना था कि वेदों को अपनी आर्ष संस्कृति मानकर चलो इस कसौटी से समाज की अस्सी प्रतिशत समस्यायें हल हो जाती है। इस विचारधारा को प्रकट करने के लिये उनके गुरू द्वारा दी गई शिक्षा आर्ष ग्रन्थ और अनार्ष ग्रन्थों का भेद करना था। जो अब तक संस्कृत साहित्य में इस दृष्टि को किसी ने नहीं अपनाया था। संस्कृत के हर ग्रन्थ में जो भी लिखा मिलता था उसे ही प्रमाण मान लेते थे। महर्षि दयानन्द जी ने इस विचार को ठोकर मारकर गिरा दिया।

वेदों के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द जी की दूसरी खोज यह थी कि वेदों के शब्द रूढ़ी नहीं है अपितु योगिक हैं। निरूक्तकार का भी यही कहना था सभी भाष्यकारों ने वेदों के अर्थों के रूढ़ी अर्थ किये हैं। सायण-उव्वट-महीधार तथा उनके पीछे चलने वाले पाश्चात् विद्वानों ने मेक्समूलर-रांघ-विल्सन-ग्रासमैन रूढ़ी अनुवाद का समर्थन किया है।

ऋषि दयानन्द जी का कहना था कि वेदों को समझा जाये तो उनमें न इतिहास मिलता है और न ही बहुदेवतावाद मिलता है। न जंगलीपन मिलता है न विकासवाद मिलता है।

इस युग के महायोगी श्री अरविन्द का कहना है कि जहां तक वेदों का प्रश्न है दयानन्द जी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वेदों के अर्थ को समझने की असली कुंजी खोज निकाली थी। वेदों के अर्थ समझने के लिए सदियों से जिस अन्धकार में हम रास्ता टटोल रहे थे उसे महर्षि दयानन्द जी ने इस अन्धकार को भेद कर यर्थात् सत्य पर पहुंचा दिया।

(अमर ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश अलोकिक सृष्टिक्रम व वैज्ञानिक मार्ग दर्शक है।)

वैदिक काल के बाद महा अन्धकार युग आया। ईश्वर-धर्म-व आध्यात्म एक प्रकार से स्वार्थी लोगों में कैद हो गये थे। जैसा जिसकी मर्जी आई वैसा ही मत तथा कथित धर्म बना दिया। यही कारण रहा कि भारत हजारों वर्षों तक पराधीन रहा। कोई भी मार्ग दशार्ने वाला नहीं था। ईश्वर की कृपा से महर्षि दयानन्द वेदों का प्रकाश युग लेकर आये थे, उन्होंने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश में सभी क्षेत्रों की समस्याओं का हल लिख डाला।

जिस महानुभाव ने ध्यान आत्मीया से सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा है वह एक महान विवेकशील बन कर कुशल नेता, कुशल प्रशासक, कुशल गृहस्थी, कुशल उदेशक, कुशल धार्मिक, कुशल अध्यापक, कुशल संचालक-सत्य, ईश्वर-सत्य, धर्म-सत्य, व्यवहार-सत्य, मान्यताएं तथा जीवन व समाज के प्रत्येक क्षेत्र में विवेकशील बनकर अपना व समाज का व राष्ट्र का उत्थान करता है।

सत्यार्थ-प्रकाश ग्रन्थ एक मात्र ऐसा विवेकशील ग्रन्थ है जो संसार में सच्चा साम्यवाद व क्रान्ति ला सकता है।

(डा. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के ग्रन्थ वैदिक संस्कृति से साभार)

-गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून उत्तराखण्ड, मो. 9411512019

त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि।
स यामनि प्रति श्रुधि॥ 1/25/20

भावार्थ-*हे बुद्धिमान् सर्वोत्तम प्रभो! आप सारे जगत् के द्युलोक के प्रकाश करने वाले और सारी पृथिवी के स्वामी है। दयामय जब हम आपकी प्रेमपूर्वक प्रार्थना करें, तब आप सुनकर हमें प्रेमी भक्त बनावें, जिससे हमारा कल्याण हो।*

गौ-दान : महा-दान

श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा द्वारा संचालित अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय में ब्रह्मचारियों कि दिन- प्रतिदिन बढ़ती संख्या के कारण टंकारा स्थित 'गौशाला' से प्राप्त दूध ब्रह्मचारियों हेतु पर्याप्त नहीं हो पा रहा है। इस कारण ट्रस्ट ने यह निश्चय किया कि तुरन्त नयी गायों को खरीद लिया जाये ताकि ब्रह्मचारियों को पर्याप्त मात्रा में दूध उपलब्ध कराया जा सके। **वर्तमान में अच्छी गाय 75000/- रूपये के लगभग प्राप्त हो रही है।**

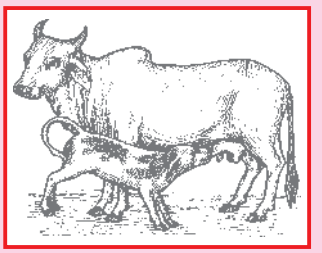

टंकारा स्थित गौशाला हेतु भारत के असंख्य आर्य परिवारों एवं आर्य संस्थाओं की ओर से **25,000/-** रुपये गाय की खरीद हेतु सहयोग राशि भेज रहे है। 3 सहयोगी प्राप्त होते ही गाय खरीदी जाती है। गुरुकुल में ब्रह्मचारियों की बढ़ती संख्या को देखते हुए एवं कच्छ में गर्म वातावरण होने के कारण गौओं का कम दूध देने के कारण अभी भी गायों की आवश्यकता है। दानी महानुभावों से निवेदन है कि इस पुण्य कार्य में अपनी श्रद्धानुसार आहुति डाल कर पुण्यार्जन करें। आप इस पुण्य कार्य के लिए राशि **श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा**, के नाम चैक/ ड्राफ्ट द्वारा केवल खाते में आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 पर भिजवाकर कृतार्थ करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

निवेदकः- **योगेश मुंजाल** (कार्यकारी प्रधान) **अजय सहगल** (मन्त्री)

*Just one **small positive thought** in the morning can change your whole day.*

टंकारा समाचार

जुलाई 2025

Delhi Postal R.No. DL (ND)-11/6037/2024-25-26

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसेंस नं० U(C) 231/2024-26

Posted at LPC Delhi RMS, Delhi-06 on 1/2-07-2025

R.N.I. No 68339/98 प्रकाशन तिथि: 23.06.2025

JBM Group stands committed towards creating value for all our stakeholders and consistently building sustainable business models via innovation and customer orientation programs, thereby creating stronger synergies for all our businesses.

Technology has been the bed rock and a key catalyst for our growth. Our persistence towards achieving excellence has transformed us and we have amalgamated our strengths and R&D acumen to make our products & services future-ready, through the power of People, Innovation and Technology.

JBM Group - Plot No.9, Institutional Area, Sector 44, Gurgaon – 122 002

91-124-4674500-550 | www.jbmgroup.com

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक–अजय सहगल द्वारा मयंक प्रिंटर्स, 2199/63, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली–5 दूरभाष : 41548503 से छपवाकर कार्यालय महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–1 दूरभाष : 23360059, 23362110 से प्रकाशित। संपादक : अजय